पृथ्वी की परिक्रमा

४४
११२

प्रकाशक

प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

१९४१

मूल्य ।=) आने

विषय-सूची

विषय			पृष्ठ
१—यात्रा का आरम्भ	...	...	१
२—हिन्द-महासागर	...	...	३
३—लाल सागर	...	...	५
४—नहर स्वेज़	...	...	७
५—मेडीटेरनियन सागर		...	८
६—इँग्लेंड		...	११
७—लन्दन	...		१३
८—लन्दन के रास्ते		...	१५
९—विलायत के कल-कारखाने	...	...	१८
१०—ब्रिटिश द्वीपसमूह	...	...	२०
११—अटलांटिक महासागर	...	...	२२
१२—न्यूयार्क शहर	...	...	२५
१३—न्यूयार्क से सनफ्रांसिस्को	...	...	२८
१४—शिकागो और नमक की झील	...	...	३०
१५—राकी पहाड़ पर	...	...	३२
१६—सनफ्रांसिसको	...	...	३४
१७—सनफ्रांसिसको की कुछ और बातें		...	३६
१८—होनोलुलू	...	...	३९
१९—जापान	...	...	४०
२०—जापानी लड़के	...	...	४३
२१—जापान की कुछ और बातें	...	...	४४

CHECKED 197
Initial

विषय			पृष्ठ
२२—मनीला	...	...	४७
२३—हांगकांग	...	...	४९
२४—चीनी भोजन का तरीक़ा	...	...	५१
२५—फिर अँगरेज़ी जहाज़ पर	...	...	५२
२६—सिंगापुर	...	...	५४
२७—घर के रास्ते पर	...	...	५५

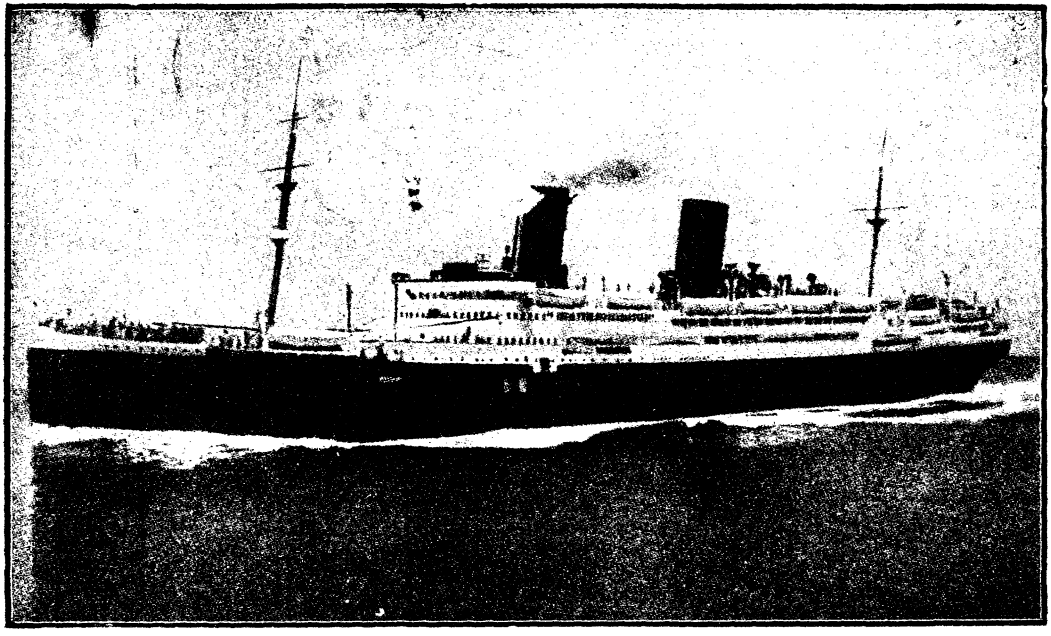

हमारा जहाज़ बहुत बड़ा था। मुखपृष्ठ

पृथ्वी की परिक्रमा

(१)

यात्रा का आरम्भ

मरे पिता को यात्रा का बड़ा शौक़ था। अकसर वे मा से कहा करते थे—"मैं चाहता हूँ कि एक बार तमाम दुनिया का चक्कर लगा आऊँ ! क्या तुम भी मरे साथ चलोगी ?" मा तो तैयार नहीं हुई पर मैं तैयार हो गया।

धीरे-धीरे वह दिन भी आगया जब हम लोग पृथ्वी की परिक्रमा करने निकले। मा हमें बम्बई तक पहुँचाने आई। विदा होते समय उसने कहा—"विनोद हम लोगों को भूलना मत। पिता को लेकर जल्दी वापस आना, तुमको इसी लिए भेजती हूँ।" उस समय उसकी आँखों में आँसू थे। मेरी छोटी बहन मुन्नी मा की उँगली पकड़े खड़ी थी और कह रही थी—"मा मैं भी विलायत जाऊँगी।" पर मा ने उसे गोद में लेकर कहा—"नहीं बेटी, तू भी चली जायगी तो मैं किसको देखकर रहूँगी। तू मेरे पास रह, विनोद तुझे सब देशों से अच्छे-अच्छे खिलौने भेजेगा। क्यों विनोद ?"

"हाँ, मा" कहकर मैंने माता को प्रणाम किया।

अब हम लोग जहाज़ पर थे और जहाज़ बड़ी तेज़ी से चल रहा था। चारों तरफ़ पानी ही पानी दिखलाई पड़ता था और कुछ नहीं। मैंने जहाज़ कभी नहीं देखा था इसलिए उसे देखने लगा।

हमारा जहाज़ बहुत बड़ा था। उस पर क़रीब एक हज़ार आदमी सवार थे। नीली पोशाक़ पहने बहुत-से हिन्दुस्तानी मल्लाह थे और कुछ अँगरेज़ मल्लाह और अफ़सर थे। हमारे खाने-पीने का इन्तज़ाम करने के लिए कुछ आदमी अलग से नौकर थे। वे सब हिन्दुस्तानी थे पर थोड़ी-बहुत अँगरेज़ी भी बोल लेते थे।

मुसाफ़िरों में हिन्दुस्तानी, अँगरेज़, फ़्रांसीसी, अमरीकन और बहुत-से दूसरे लोग थे। कुछ अँगरेज़ों के लड़के थे जो विलायत में पढ़ने जा रहे थे। कुछ हिन्दुस्तानी विद्यार्थी भी थे जो इँग्लैंड और अमरीका में पढ़ने जा रहे थे।

आजकल जहाज़ इंजन से चलते हैं। इंजन भाफ से चलाये जाते हैं। भाफ बनाने के लिए जहाज़ में नीचे ख़ूब आग जलाई जाती है जिसका धुआँ चिमनियों से होकर बाहर निकलता है। हमारे जहाज़ में दो चिमनियाँ थीं। मुझे और भी बहुत-सी चिमनियाँ-सी दिखलाई पड़ीं पर उनमें से धुआँ नहीं निकलता था। पिता जी से पूछने पर मालूम हुआ कि वे जहाज़ के भीतर हवा के आने-जाने के रास्ते थे।

मैंने देखा कि अगर समुद्र शान्त रहता है तो लोग जहाज़ के बिलकुल ऊपर चले जाते हैं और टहलते हैं या खेलते हैं। हमारे सोने का कमरा छोटा-सा था पर बहुत अच्छा बना था. ऐसे ही बहुत-से कमरे बने हुए थे। इन कमरों को केबिन कहते हैं। ये कमरे सबसे ऊपरी हिस्से में होते हैं। इंजिन बहुत नीचे होता है। माल-असबाब भी नीचे ही रक्खा जाता है।

---

(२)

हिन्द-महासागर

मैं ऊपर लिख आया हूँ कि जहाँ तक नज़र जाती थी पानी ही पानी दिखाई पड़ता था। समुद्र में मछलियाँ न हों तो यह एक ऐसा दृश्य है जिसे देखते-देखते आदमी ऊब जा सकता है। मछलियाँ तैरती-तैरती बिलकुल लहरों के ऊपर आ जाती थीं और कभी-कभी ऐसा जान पड़ता था मानो उनके पङ्ख लगे हैं और वे उड़ रही हैं पर वे लहर से बहुत ऊपर नहीं जाती थीं। ये मछलियाँ अकेली नहीं तैरतीं। बीस-बीस या तीस-तीस एक साथ मिलकर चलती थीं।

मैं मछलियों को देख ही रहा था कि पिता जी ने पूछा—"विनोद! बताओ हम लोग कहाँ हैं?"

मैं चुपचाप सोचने लगा। पिता जी ने फिर कहा—"तुम दुनिया का नक़शा लाये हो न? उसमें देखकर बताओ।"

मैंने नक़शा देखकर कहा—"हिन्द-महासागर में।"

पिता जी ने जवाब दिया—"हाँ, अब आगे अदन आयेगा, मा को कोई चिट्ठी लिखनी हो तो लिख डालो, अदन में पहुँचकर उसे डाक-बम्बे में छुड़वा देंगे।" मैं चिट्ठी लिखने चला गया।

इस जहाज़ पर पहले दिन हम लोगों ने ठीक ९ बजे सुबह को जल-पान किया। इसलिए दूसरे दिन मैं अपनी घड़ी में नौ बजा देखकर जल-पान के लिए तैयार हो गया। पर जल-पान की घण्टी नौ बजकर बीस मिनट पर बजी। जब हम लोग भोजन-भवन में पहुँचे तो वहाँ की घड़ी में केवल ९ बजे थे और मेरी घड़ी में ९ बजकर २० मिनट हो गया था।

"कौन-सी घड़ी ग़लत है?" मैंने पिता जी से पूछा। उन्होंने जवाब दिया—"दोनों ठीक हैं।"

मुझे बड़ा अचम्भा हुआ। मैंने कहा—"यह क्योंकर हो सकता है?"

पिता जी ने बतलाया—"यह तो तुम जानते ही हो कि संसार में सब जगह एक साथ ही सवेरा नहीं होता। पृथ्वी का जो हिस्सा जितना पूर्व में है वहाँ उतना ही पहले सूरज दिखलाई पड़ता है। हमारा जहाज़ पश्चिम को जा रहा है इसलिए कप्तान जहाज़ की घड़ी को रोज़ बीस मिनट कम

करता जाता है। ताकि हमारा समय और सूरज के निकलने का समय एक ही रहे। अगर ऐसा न किया जाय तो कुछ दिन में हम आधी रात को खाना खाने के लिए बुलाये जाने लगें। हिन्दुस्तान में इँग्लैंड स पाँच घंटे पहले सबेरा होता है। इसलिए थोड़ा-थोड़ा रोज़ समय कम करते रहने से जब हम इँग्लैंड में पहुँचते हैं तो हमें समय-सम्बन्धी कोइ अड़चन नहीं मालूम हाती।

---

(३)

लाल सागर

मैंने पूछा—"पिता जी, अब हम लोग कहाँ पर हैं ?"

पिता जी ने जवाब दिया—"इस बार वह नक़शा खोलो जिसमें एशिया, यारप और अफ़्रीका एक में दिखाये गये हैं। अब हम उस सागर के मुँह पर हैं जो एशिया और अफ़्रीका के बिलकुल बीच में है। बताओ इसका क्या नाम है ?"

मैंने कहा—"लाल सागर।"

पिता जी बोले—"हाँ।"

मैंने देखा कि इसका नाम लाल सागर ज़रूर है पर अभी तक पानी नीला ही दिखाई पड़ता है। यहाँ बड़ी कड़ी धूप पड़ती है। अरब के रेगिस्तान स जो हवा इस सागर पर बहती है वह बहुत गरम होती है।

इस हवा के कारण हम लोगों में बड़ी सुस्ती आई। मेरी तो यहाँ सिवाय चुपचाप बैठे रहने के और कुछ करने की तबीअत न हुई।

अदन देखने की मेरी बड़ी इच्छा थी, पर जहाज़ वहाँ रात में पहुँचा और ज़्यादा देर तक नहीं ठहरा, इसलिए मैं किनारे पर नहीं जा सका। पर जहाज़ पर मुझे अदन के बारे में बहुत-सी दिलचस्प बातें मालूम हुईं।

अदन में शाम होते ही लोग अपना पानी या तो बहा देते हैं या उसे ढक देते हैं। ऐसा करने से मच्छड़ नहीं पैदा होते। बात यह है कि मच्छड़ पानी में ही अंडे देते हैं और अगर उनको खुला पानी कहीं न मिले तो वे अंडे नहीं दे सकते। हमारे देश में जो मलेरिया बुख़ार फैलता है वह मच्छड़ों के काटने से ही होता है। यदि हम लोग भी घरों के पास रात में खुला पानी न रहने दें तो मच्छड़ों से बच सकते हैं।

अब हम लोग मिस्र और अरब के बीच में से जा रहे हैं। पुराने ज़माने में मिस्र उतना ही बढ़ा-चढ़ा देश था जितना हमारा भारतवर्ष। आजकल मिस्र में मुसलमान बस गये हैं और जहाँ-तहाँ पुराने खँडहर देखने में आते हैं।

अरब में मुसलमान रहते हैं। यहीं से मुसलमान सारे देश में फैले हैं। मुसलमानों का बड़ा तीर्थ मक्का अरब में ही है। यह देश बिलकुल रेगिस्तान है। ज़्यादातर लोग ऊँट पर अपना घर-बार लिये फिरा करते हैं।

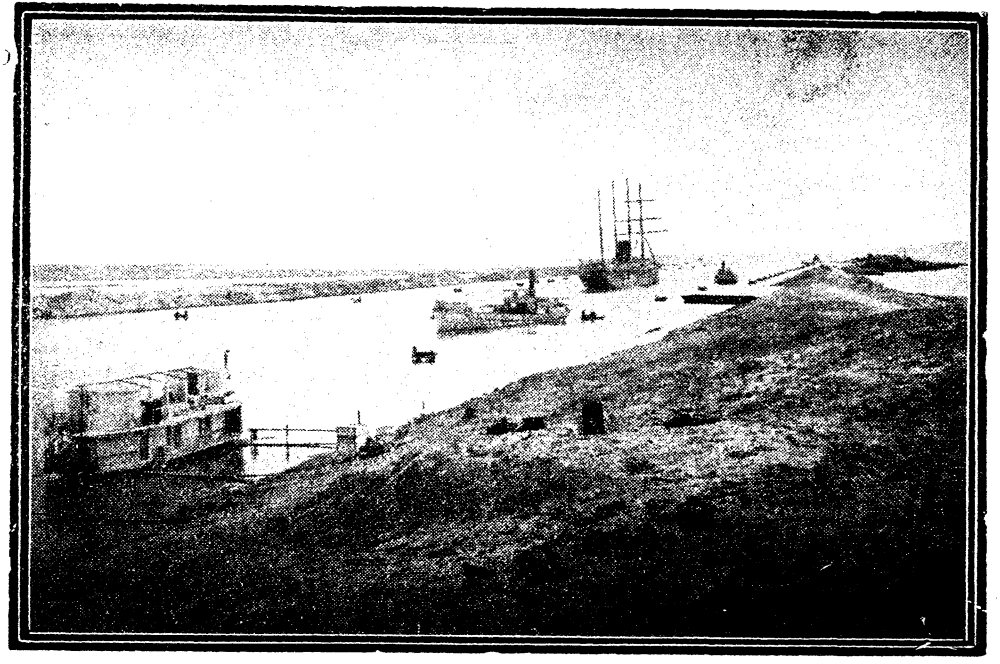

स्वेज़ नहर बहुत चौड़ी नहीं है। पृष्ठ ७

(४)

नहर स्वेज़

लाल सागर को पार करने के बाद हम लोग नहर स्वेज़ में आये। इस नहर को आदमियों ने काटकर बनाया है। जब यह नहर नहीं कटी थी तो हिन्दुस्तान से इँग्लेंड जाने के लिए पूरे अफ़्रीका का चक्कर लगाना पड़ता था और बहुत देर लगती थी। अब इस नहर में होकर जहाज से आदमी सिर्फ़ चार हफ़्ते में इँग्लेंड पहुँच सकता है।

यह नहर बहुत चौड़ी नहीं है। जहाज़ पर ज़ोर से बोलने से दोनों किनारों के लोग साफ़ सुन सकते हैं। एक जगह पर हमारा जहाज़ बिलकुल किनारे से सटाकर रस्सों से बाँध दिया गया ताकि दूसरे जहाज़ को जो हिन्दुस्तान जा रहा था, रास्ता मिल जाय।

इस नहर को एक फ़्रांसीसी ने बनाया था। उसका नाम लेसेप्स था। नहर के दरवाज़े पर उसकी एक विशाल मूर्ति बनी है।

पोर्टसेड में पहुँचकर हम लोग जहाज़ से उतरे और छोटी-छोटी नावों में बैठकर किनारे गये। जहाज़ किनारे तक नहीं जा सकता था इसलिए नावों में ही जाना पड़ा।

पोर्टसेड मुझे बहुत अच्छा लगा। यहाँ सब देशों के आदमी आकर बस गये हैं और बड़ी-बड़ी दूकानें हैं। अबी

लोगों की तादाद यहाँ बहुत ज़्यादा है और कुछ पूरब के भी आदमी हैं।

बन्दरगाह जहाज़ों से खचाखच भरा था। सब देशों के जहाज़ दिखलाई पड़ रहे थे। यहाँ जहाज़ कोयला भी लेते हैं। जहाज़ पर मा को मैंने जो चिट्ठी लिखी थी उसे मैं अपने साथ लेता आया था। उसे डाक-बम्ब में छोड़ने के बाद मुझे सिवाय शहर घूमने के और कोई काम नहीं था।

---

(५)

मेडीटेरेनियन सागर

पिता जी ने कहा—"अपना नक़शा खोलो और उस सागर का नाम बतलाओ जो एशिया, योरप और अफ़्रीका तीनों के बीच में है।"

मैंने नक़शा खोलकर कहा—"मेडीटेरेनियन सागर।"

पिता जी बोले—"हाँ, यह सागर संसार के सब सागरों से अधिक महत्त्व का है। इसे ज़रा ग़ौर से देखो। यह चारों तरफ़ ज़मीन से घिरा हुआ है। इसलिए इसे मेडीटेरेनियन अर्थात् भूमध्यसागर कहते हैं। इस सागर के चारों तरफ़ जो दश हैं वे पुराने ज़माने में बड़े तरक़्क़ी पर थे। इन्हीं देशों की पुरानी लिखावटों के सहारे मनुष्य का इतिहास लिखा गया है।

जिससे हमें पता चलता है कि हज़ारों वर्ष पहले पुरुष-स्त्री और लड़के-लड़कियाँ किस प्रकार रहते थे। इन्हीं देशों की तरह हमारा भारतवर्ष भी बहुत पुराना देश है।"

दूसरे लोगों से बात-चीत करने पर मुझे इस सागर के बारे में और भी बहुत-सी बातें मालूम हुईं। पुराने ज़माने में जो लोग यहाँ रहते थे उनका यह ख़याल था कि ज़मीन चपटी है और मेडीटेरेनियन के अलावा और कोई समुद्र नहीं है। यदि कोई आदमी इसके पार जायगा तो पृथ्वी के छोर पर पहुँच जायगा और शून्य में गिर पड़ेगा। तब आजकल की तरह दुनिया के नक़्शे नहीं थे और लोगों को भूगोल के बारे में बहुत कम मालूम था।

मेडीटेरेनियन के चारों तरफ़ जो सुन्दर देश बसे हैं उनके बारे में जानने की मुझे बड़ी इच्छा हुई पर हम एक ऐसे जहाज़ पर थे जो बहुत तेज़ी से दौड़ रहा था और बहुत कम ठहरता था इसलिए हमें कुछ मालूम नहीं हो सका।

सिर्फ़ माल्टा में हमारा जहाज़ एक दिन के लिए ठहरा। माल्टा मेडीटेरेनियन के बीच में एक छोटा-सा टापू है जो अँगरेज़ों के अधिकार में है। बन्दरगाह में स हम लोगों ने देखा कि माल्टा के चारों तरफ़ एक बड़ी ऊँची चट्टानी दीवाल खड़ी है।

माल्टा से कुछ जहाज़ सीधे जिब्राल्टर चले जाते हैं और कुछ मारसेलीज़ होकर जाते हैं। मारसेलीज़ फ़्रांस के

दक्खिन में एक अच्छा शहर और बन्दरगाह है । वहाँ हमने कई एक अजीब चीज़ें देखीं ।

हमारे जहाज़ के पास ही एक दूसरा जहाज़ लादा जा रहा था । बड़े-बड़े क्रेन खड़े थे जो भारी से भारी बोझ को बड़ी आसानी से उठाकर जहाज़ पर रख देते थे। क्रेन अँगरेज़ी में बोझा उठाने के यन्त्र को कहते हैं। घोड़े, हाथी, ऊँट आदि सभी जानवर क्रेनों में ही उठाकर रक्खे जाते हैं। कभी-कभी जब ये जानवर हवा में झूलते हुए ऊपर जाते हैं तो खूब टाँगें झटकते हैं और शोर मचाते हैं।

घोड़ों का जहाज़ पर चढ़ाना और जानवरों के मुक़ाबिले में ज़रा मुश्किल होता है। इसलिए उनको बड़े-बड़े पिंजड़ों में खड़ा करके चढ़ाया जाता है। पिंजड़ों में दोनों तरफ़ दरवाज़े होते हैं। एक दरवाज़े से घोड़े उनमें हाँके जाते हैं। जब वे पिंजड़ों में पहुँच जाते हैं तो दोनों दरवाज़े बन्द कर दिये जाते हैं। और जब पिंजड़े जहाज़ पर पहुँचते हैं तो दूसरी तरफ़ के दरवाज़े खोल दिये जाते हैं ताकि घोड़े बाहर निकल आयें। कभी-कभी ऐसा होता है कि पिंजड़ों में हाँकते समय कुछ घोड़े एक तरफ़ से घुसते हैं और दूसरी तरफ़ से निकल जाते हैं तब वे फिर से हाँके जाते हैं। कुछ घोड़े तो ऊपर जाते समय चुपचाप खड़े रहते हैं और कुछ चिल्लाते हैं और पिंजड़े में खूब लात चलाते हैं।

मारसेलीज़ से हम लोग जिब्राल्टर आये, जिब्राल्टर का जलडमरूमध्य मेडीटेरनियन से बाहर निकलने का दूसरा रास्ता है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि जिब्राल्टर, माल्टा और पोर्टसेड तीनों अँगरेजों के अधिकार में हैं। इस तरह दूसरे देशों के बीच में होते हुए भी मेडीटेरेनियन सागर बिलकुल अँगरेज़ों के क़ब्ज़े में है। माल्टा और जिब्राल्टर में अँगरेज़ी जहाज़ों की रक्षा करने के लिए अँगरेज़ी फ़ौजें रहती हैं। जिब्राल्टर का चट्टान एक बड़ा मज़बूत क़िला-सा है और ऊपर बड़ी-बड़ी तोपें लगी दिखाइ देती हैं। पानी के बीच में खड़ा हुआ यह चट्टानी क़िला बड़ा रोबीला और सुन्दर दिखाइ पड़ता है।

——

(६)

इँग्लेंड

क़रीब ११ बजे दिन को हम लोग इँग्लेंड पहुँचे। हमारा जहाज़ टिलबरी बन्दर पर खड़ा हुआ। पर बिलकुल किनारे पहुँचकर उतरने में हमें तीन घण्टे लगे क्योंकि आगे रास्ते में और भी बहुत-से जहाज़ खड़े थे। तीसरे पहर क़रीब चार बजे हम लोग रेलगाड़ी में बैठकर लन्दन पहुँचे।

रेलगाड़ी की खिड़की से हमने पहले-पहल इँग्लेंड के हरे-भरे खेत देखे। खेतों में गाय-बैल चर रहे थे। पर इनके हमारी हिन्दुस्तानी

गायों की तरह डील बिलकुल नहीं था और उनकी खाल में बाल अधिक थे। इससे उनका शरीर इतना सुन्दर और चिकना नहीं दिखाई पड़ता था जैसा कि हम हिन्दुस्तान में देखते हैं। मैंने पिता जी से उसका कारण पूछा।

उन्होंने जवाब दिया—"यहाँ के लोग गाड़ी में या हल में अब बैल नहीं जोतते, शायद इसी लिए उनके डील नहीं रहा, अब उसकी ज़रूरत ही क्या है?"

मुझे बड़ी हँसी आई।

मैंने देखा कि इँग्लेंड में धूप बहुत कम होती है। नवम्बर के महीने में हम लोग वहाँ पहुँचे थे। पर सूरज चार ही बजे डूब जाता था और सबेरे क़रीब आठ बजे तक नहीं दिखाई पड़ता था। सबेरे कपड़े पहनने के लिए मुझे गैस जलानी पड़ती थी।

यहाँ गैस के बारे में कुछ बतला देना ज़रूरी है। एक बड़ी भट्ठी में बहुत-सा कोयला सुलगाया जाता है और एक तरह की गैस बाहर निकलती है जिसे कोयले की गैस कहते हैं। यह बिलकुल हवा की तरह होती है और दिखलाई नहीं पड़ती। पर इसकी बास इतनी तेज़ होती है कि यह छिप नहीं सकती।

यह गैस नलों के ज़रिये से तमाम घरों में, स्कूलों में और दूकानों में ले जाई जाती है। हर बम्बों में पेंच लगे होते हैं जिन्हें घुमाकर हम गैस जला सकते हैं। यह मिट्टी के तेल के लैम्प की तरह जलती है। इँग्लेंड के सब बड़े-बड़े शहरों में

इसी तरह कोयले की गैस बनाते हैं। कहीं-कहीं हमने बिजली की रोशनी देखी जैसी कि हमारे देश में भी होती है।

यहाँ इतना अँधेरा छाया रहता है कि अधिकांश घरों में दिन में भी लोग लैम्प जलाकर काम करते हैं। ऐसा कोई भी लड़का नहीं मिलेगा जो पढ़ने न जाता हो। लड़कियाँ भी सब स्कूल जाती हैं। जो लड़के स्कूल नहीं जाते उन्हें एक अफ़सर आकर ले जाता है।

इस मौसम में यहाँ इतनी ठंढ पड़ती है कि लड़के-लड़कियाँ बड़े मोटे कोट पहनकर बाहर निकलते हैं। अँगीठी जलाकर या गरम पानी के नल पहुँचाकर स्कूल के सब कमरों में गरमी पहुँचाई जाती है। ऐसा न किया जाय तो मारे ठंढ के लड़के बैठकर पढ़ नहीं सकते।

यह हाल देखकर हमें हिन्दुस्तान के सूर्यदेवता को धन्यवाद देने की इच्छा होती है। हिन्दुस्तान की तरह यहाँ भी ग़रीब लड़कों की कमी नहीं है पर इन बेचारों को भूख के साथ ही साथ ठंढ की पीड़ा भी बहुत सहनी पड़ती है।

---

(७)

लन्दन

लन्दन में मैं सबसे पहले पार्लियामेंट का भवन देखने गया। यह बहुत बड़ी और सुन्दर इमारत है। दर्शक लोग बरामदों में

खड़े होकर उस बड़े हाल को देख सकते हैं जहाँ मेम्बर लोग बैठते हैं। मैंने भुण्ड के भुण्ड मेम्बरों को बड़ी-बड़ी क़तारों में बैठे और व्याख्यान देते हुए सुना। इसे हाउस आफ़ कामन्स कहते हैं। एक ऐसा ही बड़ा हाल और है जिस हाउस आफ़ लार्ड्स कहते हैं। उसमें सिर्फ़ बड़े लोग बैठते हैं। इन्हीं दोनों दलों की सहायता से अँगरेज़ों का राज-काज चलता है।

पार्लियामेंट के पास ही वेस्ट मिनिस्टर अबी है। यह बहुत पुराना, बहुत सुन्दर और बहुत बड़ा गिरजाघर है। इसी में ब्रिटिश सम्राट् का राजतिलक होता है। इँग्लेंड के ख़ास-ख़ास आदमी यहीं दफ़नाये भी जाते हैं। लन्दन के शोर-गुल के बीच में बड़े-बड़े राजा और रईसों को इस तरह चुपचाप सोते देखकर दिल में एक अजीब तरह का भाव पैदा होता है।

कलकत्ता और बम्बई हमारे देश के सबसे बड़े शहरों में से हैं, पर लन्दन उनसे भी बहुत बड़ा है। हिन्दुस्तान के सात बड़े-बड़े शहरों को एक तरफ़ रख दें और लन्दन को एक तरफ़, तब भी उसमें ज़्यादा आदमी निकलेंगे। लन्दन दुनिया में सबसे बड़ा शहर है।

नदी के ढाल की तरफ़ कुछ फ़ासले पर लन्दन का क़िला है। पुराने जमाने में बड़े-बड़े क़ैदी यहाँ रक्खे जाते थे पर अब इसमें विलायत के सबसे सुन्दर गहने रक्खे हैं। सम्राट् के मुकुट भी यहाँ रक्खे रहते हैं।

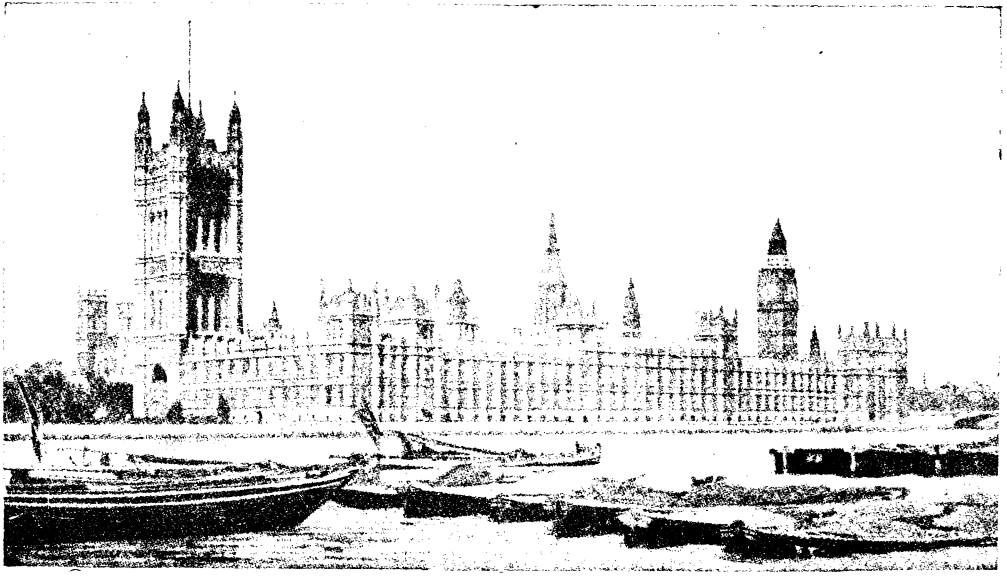

लन्दन में पार्लियामेंटभवन बहुत बड़ी और सुन्दर इमारत है। पृष्ठ १४

क़िले के पास नदी पर एक बड़ा पुल बना हुआ है। बड़े-बड़े जहाज़ों को रास्ता देने के लिए यह पुल बीच से खुल जाता है।

लन्दन में एक और बड़ा गिरजाघर है जिसे सेंटपाल का गिरजा कहते हैं। यह बड़ा सुन्दर है। इसके बड़े मंडप के नीचे एक बरामदा इस ख़ूबी से बना है कि एक तरफ़ की धीमी से धीमी आवाज़ भी दूसरी तरफ़ ख़ूब सुनाइ पड़ती है। इस गिरजे का घंटा बहुत बड़ा है और तोल में चार सौ मन से भी ऊपर है।

---

(८)

लन्दन के रास्ते

लन्दन इतना बड़ा शहर है और यहाँ की सड़क गाड़ियों से और मोटरों से इतनी भरी रहती हैं कि उन पर कोइ पैदल नहीं चल सकता। इसके लिए सड़क के दोनों तरफ़ पटरियाँ बनी होती हैं। हिन्दुस्तान की तरह यदि यहाँ कोई सड़क पर चले तो फ़ौरन किसी न किसी गाड़ी या मोटर के नीचे दब जाय।

इसलिए कि लोग एक जगह से दूसरी जगह बड़ी आसानी से पहुँच जायँ, लन्दन में ज़मीन के नीचे रेलगाड़ियाँ

दौड़ती रहती हैं। एक बार मुझे भी ज़मीन के नीचे की रेल-गाड़ी में बैठने का मौक़ा मिला।

टिकट ख़रीदने के बाद हम लोग एक कमरे में खड़े हुए। धीरे-धीरे और भी बहुत-से आदमी आकर उसमें खड़े हो गये। जब कमरा भर गया तो दरवाज़ा बन्द कर दिया गया। एक आदमी ने चाभी घुमाई और कमरा पृथ्वी के नीचे धँसने लगा।

बहुत नीचे पहुँचकर कमरा खड़ा हो गया। दरवाज़े खुल गये और लोग निकलकर इधर-उधर भागने लगे। दीवालों पर गाड़ियों के नाम और वे किधर जायँगी यह लिखा रहता है। यहाँ सब लोग पढ़ना जानते हैं इसलिए पढ़कर जिसे जहाँ जाना होता है, चला जाता है। कोई किसी से कुछ पूछता नहीं। गाड़ियाँ बहुत थोड़ी देर के लिए खड़ी होती हैं। जो जल्दी से दौड़कर चढ़ नहीं जाता वह पीछे रह जाता है। यहाँ हर एक आदमी बजाय चलने के दौड़ता हुआ दिखाई देता है। हम लोग भी अपनी गाड़ी में बैठ गये।

हम लोग वाटरलू में बैठे थे और हमें दूसरे रेलवे स्टेशन किंसक्रास को जो बिलकुल लंदन के दूसरी तरफ़ है, जाना था। हम लोग मोटर पर भी बैठकर जा सकते थे पर इसके लिए हमें क़रीब चार रुपये देना पड़ता और रेल में जाने से कुल चार-पाँच आने ही देने पड़े।

हमारी रेलगाड़ी का रास्ता टेम्स नदी के नीचे होकर था, यह बहुत चौड़ी नदी है। इसमें बहुत दूर तक जहाज़ चले जाते हैं। पर यह हिन्दुस्तान की नदियों के मुक़ाबिले में लम्बी कम है।

टेम्स के नीचे मैं सोच रहा था कि कहीं ऐसा न हो कि सुरङ्ग फट जाय और हम लोग डूब जायँ। पर लोगों की भीड़ इतनी थी कि किसी तरह का डर नहीं मालूम होता था।

रेल के बाहर मुझे कुछ नहीं दिखाई पड़ता था पर भीतर ख़ूब रोशनी हो रही थी। बहुत-से लोग अख़बार पढ़ रहे थे और आपस में बात-चीत बहुत कम करते थे। रेलगाड़ी के चलने से बड़ा शोर हो रहा था और मेरे दिल में बहुत-से सवाल उठ रहे थे। इसलिए मैं पिता जी से ज़ोर-ज़ोर से पूछने लगा पर उन्होंने मुझे इशारे से चुप करा दिया और कहा—"यहाँ इस तरह बातें करना क़ायदे के ख़िलाफ़ समझा जाता है।"

गाड़ी से उतरने पर हम लोग फिर एक कमरे में आकर खड़े हुए। इस बार यह कमरा ऊपर को उठा और हम फिर खुले संसार में पहुँचे। बाहर बड़ी सर्दी पड़ रही थी पर मैंने अँगरेज़ी ढङ्ग के ऊनी कपड़े पहन लिये थे इसलिए बहुत तकलीफ़ नहीं हुई। यहाँ यदि कोई हिन्दुस्तान की तरह ढीली पोशाक पहने तो शायद मारे ठंड के अकड़ जाय।

---

(९)

विलायत के कल-कारख़ाने

लन्दन में हम बहुत दिन रहे। एक रोज़ हम लोग एक कारख़ाना देखने गये। कारख़ानों की इमारतें बहुत बड़ी होती हैं, उनमें बहुत-से यन्त्र होते हैं और हज़ारों आदमी काम करते रहते हैं। जो कारख़ाना हम लोगों ने देखा वह सिलाई का था। उसमें सैकड़ों कपड़ा सीने की मशीनें एक साथ चल रही थीं। हमारे देश में कपड़ा सीने की मशीन हाथ या पैर से चलाई जाती है पर इंग्लैंड में एक ही साथ बहुत-सी मशीनें चलती हैं और उन्हें एक इंजन चलाता है। इंजन से लेकर चारों तरफ़ चमड़े के फ़ीते फैले रहते हैं, वे जिन-जिन मशीनों में लगा दिये जाते हैं वे चलने लगती हैं। इस कारख़ाने में इतनी मशीनें चलती देखकर मुझे बड़ा अचम्भा हुआ और सबसे अचम्भे की बात मैंने यह देखी कि उन तमाम मशीनों पर स्त्रियाँ काम कर रही थीं। वे सब मज़दूर स्त्रियाँ थीं पर देखने में बड़ी होशियार मालूम होती थीं और उनकी पोशाक बड़ी साफ़ थी।

हमारे देश में इस दर्जे की स्त्रियों से बोझा आदि ढोने का मोटा काम लिया जाता है। जब कोई मकान आदि बनने लगता है तो वे सिर पर ईंट और गारा लेकर चलती हैं। पर इँग्लैंड में यह बात नहीं है। इसका कारण शायद यह हो कि यहाँ की सब स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी होती हैं।

स्त्रियों को इस बात का हमेशा ख़याल रखना पड़ता है कि उनके कपड़े या बाल फीतों में न लिपट जायँ। इसलिए अपने बालों को वे सिर पर बड़ी सावधानी से बाँध रखती हैं। काम कर चुकने पर सुन्दर हैट लगाकर वे अपने घरों को जाती हैं पर जिनके घर पास होते हैं वे सिर पर शाल रखकर फुर्ती से निकल जाती हैं।

यहाँ स्त्रियाँ जो काम करती थीं वह मुझे बहुत नीरस जान पड़ा। हमारे देश में एक ही दर्ज़ी पूरा कपड़ा सीता है। लेकिन इँग्लेंड में यह बात नहीं है। एक स्त्री एक ही तरह की चीज़ सीती है। जैसे जो जेब सीती है वह दिन भर ढेर के ढेर जेब ही सियेगी और जो बाँह सीती है वह केवल बाँह ही सियेगी। कुछ लड़कियाँ चारों तरफ़ घूमती रहती हैं जिन्हें 'सीकर' कहते हैं। ये इन अलग-अलग सिले हुए टुकड़ों को एक स्थान पर ले जाती हैं जहाँ सब एक में सिये जाते हैं।

कपड़ों के काटने का ढङ्ग भी बड़ा अजीब था। मैंने एक मशीन देखी जो एक मोटे ऊनी कपड़े से बारह-बारह कोट एक साथ काट सकती थी। इसमें एक बड़ा तेज़ चाक़ू लगा था जो मशीन से चलता था। कोई क़ैंची लेकर बैठे तो जितना यह मशीन एक बार में काटती थी, उतना शायद दिन भर में काटे।

इस कारख़ाने में मैंने सैकड़ों स्त्रियों को मशीनों पर काम करते देखा। एक हफ़्ते में वे हज़ारों कोट-पैंट तैयार कर डालती होंगी। यह कारख़ाना लीड्स में है। उस शहर में

मैंने इस तरह के और भी कारख़ाने देखे थे। उत्तर के शहरों में कल-कारख़ाने बहुत हैं।

सब स्त्रियों और लड़कियों को मैंने ख़ुश और संतुष्ट देखा। उन्हें मज़दूरी समय के हिसाब से नहीं, काम के हिसाब से मिलती है। इसलिए जो ज़्यादा मेहनत करती हैं वे ज़्यादा कमा लेती हैं। शनीचर को आधे दिन की और इतवार को पूरे दिन की छुट्टी होती है जिससे उन्हें दिलबहलाव के लिए भी ख़ूब समय मिल जाता है।

जाड़े के दिनों में तमाम कमरों में बिजली की रोशनी की जाती है। रोशनी का इंतज़ाम न रहे तो इतना अँधेरा रहता है कि कोई काम नहीं हो सकता।

---

(१०)

ब्रिटिश द्वीप-समूह

ग्रेटब्रिटेन तीन हिस्सों में बँटा हुआ है। इंग्लैंड, स्काटलैंड और वेल्स। पास ही एक द्वीप और है जिसे आयरलैंड कहते हैं।

इंग्लैंड से हम लोग स्काटलैंड में गये और एडिनबरा में ठहरे। एडिनबरा में फोर्थ नदी पर एक बहुत बड़ा पुल बँधा हुआ है। यह पुल लोहे का महराबदार बना है और हर एक महराब क़रीब १,७६० फ़ीट है।

यह बहुत पहाड़ी और पथरीला शहर है। सड़कें बहुत ऊँची-नीची हैं। मुख्य सड़कों में एक का नाम प्रिंसज़ स्ट्रीट है। इसके एक तरफ़ बहुत दूर तक बड़ा सुन्दर बाग़ लगा हुआ है। एडिनबर्ग का विश्वविद्यालय लन्दन के विश्वविद्यालय से भी पुराना है पर उतना पुराना नहीं है जितना आक्सफ़ोर्ड और कैम्ब्रिज का।

मैं ब्रिटिश द्वीप-समूह के कई एक शहरों को देखना चाहता था पर दूसरे ही हफ़्ते में हमें अमरीका के लिए रवाना होना था इसलिए मेरी यह इच्छा पूरी न हो सकी।

एडिनबर्ग से क़रीब एक घंटे का रेलवे सफ़र तय करके हम लोग ग्लासगो पहुँचे। ग्लासगो क्लाइड नदी पर बसा हुआ है। यहाँ जहाज़ बनते हैं। बन्दरगाह में जाकर जहाज़ों का कारख़ाना देखकर हम लोग चकित रह गये। कोई-कोई जहाज़ तो इतने बड़े थे कि बड़ी-बड़ी इमारतों को भी मात करते थे और उनके भीतर तरह-तरह के काम के लिए सैकड़ों कमरे थे।

ग्लासगो में ट्रामगाड़ियाँ बहुत चलती हैं और थोड़े ही पैसों में बहुत दूर तक पहुँचा देती हैं। यहाँ के लोगों को इस बात का घमण्ड है कि उनके यहाँ ट्राम का किराया दुनिया में सबसे सस्ता है।

ग्लासगो से हम लोग लीवरपूल गये। इस रास्ते में हमें बहुत कड़ी ठंढ का सामना करना पड़ा। ज़मीन पर चारों तरफ़

सफ़ेद और मुलायम रुई की तरह बर्फ़ बिछी थी पर सर्द बहुत थी।

मैं कम्बल का कोट पहने था और घुटनों तक दो लबादे ओढ़े था फिर भी ठंढ से अकड़ रहा था। गाड़ी का गार्ड बहुत भला आदमी था। मेरी हालत देखकर उसने धातु का बना एक बड़ा-सा बन्द बरतन मँगवाया। उसमें गरम पानी भरा था। उस पर उसने मुझे पाँव रखने के लिए कहा तब कहीं जाकर मेरे पैरों का जाड़ा छूटा।

रात-दिन मैं ऊनी मोज़े और बूट पहन रहता था। उस पर भी यह हालत थी। गाड़ी की तमाम खिड़कियाँ और दरवाज़े बन्द करके सिकुड़कर बैठने से भी जाड़ा नहीं जाता था।

लीवरपूल बहुत बड़ा शहर है। शायद बम्बई और कलकत्ता से भी बहुत बड़ा। यहाँ का बन्दरगाह भी बहुत बड़ा है। दुनिया के तमाम हिस्सों से यहाँ जहाज़ आते-जाते हैं। अमरीका जाने के लिए हम लोग यहीं जहाज़ पर सवार हुए।

---

(११)

अटलांटिक महासागर

ओलिम्पिक संसार के सबसे बड़े जहाज़ों में से एक का नाम है। इसमें बजाय दो के चार चिमनियाँ थीं। इसका इंजन इतना ताक़तवर था और यह इतनी तेज़ी से जा रहा था

कि सब जगह इसमें एक अजीब फटने की-सी आवाज़ हो रही थी।

यदि अटलांटिक महासागर शांत रहता है और राह में कोई घटना नहीं होती तो यह जहाज़ ६ दिन में लीवरपूल से न्यूयार्क पहुँच जाता है।

इस जहाज़ में क़रीब आठ हज़ार आदमी बैठे थे। स्त्रियाँ और बच्चा की तादाद अधिक थी। परिवार के परिवार कनाडा में बसने के लिए जा रहे थे।

जहाज़ में छोटी-छोटी नावें भी बहुत-सी थीं। हर एक मुसाफ़िर के और मल्लाह के हिस्से में एक नाव पड़ी थी। क़रीब पचास आदमियों में यह बँटवारा किया गया था जिनमें १७ लड़के भी शामिल थे। लड़कों में मैं भी था।

अगर जहाज़ को कुछ हो जाता तो हम लोग अपनी-अपनी नावों को खोल देते और उसमें पहले लड़कों को फिर स्त्रियों को और उसके बाद अगर जगह बचती तो आदमियों को भरते।

जहाज़ में मेरी नाम की एक तीन बरस की छोटी-सी लड़की थी। उसके बाल सुनहले थे और वह बहुत खिलाड़ी लड़की थी। वह ख़ास तौर से मुझे सौंपी गई थी। अगर नावें खोलने की नौबत आती तो मेरा सबसे पहले यह फ़र्ज़ होता कि वह लड़की मेरी नाव में सही-सलामत बैठ गई है। उसकी माँ के दो लड़के और थे।

मैं रास्ते भर यही मनाता रहा कि जहाज़ में कोई घटना न हो। समुद्र में बड़ा भारी तूफ़ान आगया था और क़रीब-क़रीब सब मुसाफ़िरों को समुद्री बीमारी हो गई थी। ईश्वर की कृपा से मैं बच गया था। इसलिए जो बीमार थे उनकी सेवा और सहायता करके मैं अपने को बड़ा भाग्यवान् समझने लगा था।

जैसे रेलगाड़ी में बैठने या लेटने के लिए दीवाल से निकली पटरियाँ बनी होती हैं, वैसे ही इस जहाज़ में भी थीं। एक रात को मैं अपनी पटरी पर पड़ा-पड़ा कुछ सोच रहा था कि इंजन के चलने से जहाज़ में जो हलका और धक्का हो रहा था वह बन्द हो गया। मैं उठ बैठा। अब जहाज़ खड़ा था पर लहरें बड़े झोंके के साथ उसे इधर से उधर और उधर से इधर फेंक रही थीं। मैं भी अपनी पटरी से लुढ़ककर नीचे जा गिरा।

सबेरा होने पर मुझे मालूम हुआ कि तूफ़ान इतना ज़ोर पकड़ गया था कि कप्तान को जहाज़ खड़ा कर देना पड़ा और लहरों से जहाज़ में जो पानी भर गया था उसे पम्प के द्वारा निकाला गया।

लहरें पहाड़ों के समान ऊँची उठती चली आती थीं। दक्षिण हिन्दुस्तान में मैंने नीलगिरि की पहाड़ियाँ देखी थीं। इन लहरों को देखकर मुझे उनकी याद आ गई। मुझे

ऐसा जान पड़ा मानो हम उन्हीं पहाड़ियां पर बैठे हैं और व उलट-पुलट रही हैं।

पिता जी ने मुझसे कहा—"अब घबड़ाने की कोइ बात नहीं है। कल हम लोग न्यूयार्क पहुँच जायंगे। वहाँ हमें सबसे पहल नदी के मुँह पर स्वतन्त्रता की मूर्ति दिखाइ पड़ेगी।"

इस सफ़र में बजाय छः दिन के पूरे आठ दिन लगे। न्यूयार्क में पहुँचकर मैंने देखा कि मेरी घड़ी पाँच घंटे लेट हो गइ है। समय का जो फ़र्क़ हिन्दुस्तान और इँग्लेंड क बीच में पड़ा था वही इंग्लेंड और न्यूयार्क के बीच में पड़ा।

---

(१२)

न्यूयार्क शहर

न्यूयार्क शहर की इमारतें देखन ही लायक़ हैं। इतनी ऊंची इमारतें मैंने कहीं नहीं देखीं। हर मकान कइ-कइ मंज़िल ऊँचे हैं। बारह मंज़िल से कम का तो शायद ही कोइ हो। बहुत-से पचीस-पचीस मंज़िल तक ऊँचे उठते चले गये हैं। हम लोग एक होटल में ठहर और जो कमरा हमें रहन को मिला वह ग्यारहवीं मंज़िल पर था। खाना खाने के लिए हमें सबसे नीचे आना पड़ता था।

यहाँ के मकानों में सीढ़ियाँ नहीं होतीं, लिफ़्ट लगे होते हैं जो एक मिनट से भी कम समय में आदमी को ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर पहुँचा देते हैं।

हमारे हिन्दुस्तान में जो मकान चार मंज़िल के होते हैं वे बहुत ऊँचे समझे जाते हैं पर न्यूयार्क में उनका तिगुना ऊँचा मकान भी मामूली ऊँचाई का समझा जायगा।

न्यूयार्क की सबसे ऊँची इमारतों में एक ५३ मंज़िल ऊँची है। इसकी शकल धोबी के इस्तिरी करने के लोहे के समान है इसलिए यह 'धोबी का लोहा' के नाम से मशहूर है।

न्यूयार्क की सड़कों पर जब मैं चलने लगा तो वे मुझे बहुत तङ्ग दिखलाई पड़ीं पर वास्तव में वे बहुत चौड़ी हैं। बहुत-सी सड़कों पर ६ गाड़ियाँ बराबर-बराबर एक साथ चल सकती हैं। सड़कें तङ्ग इसलिए दिखलाई पड़ती हैं कि इमारतें बहुत ऊँची हैं।

यहाँ की सड़कें हिन्दुस्तान की सड़कों की तरह टेढ़ी-मेढ़ी नहीं बल्कि बिलकुल सीधी होती हैं। और एक-दूसरे के साथ समकोण बनाती हुई मिलती हैं। जो एक ही तरफ़ को जाती हैं उन्हें एवेन्यू और जो उनके साथ समकोण बनाती हैं उन्हें स्ट्रीट कहते हैं।

एवेन्यू और स्ट्रीटों के नाम नहीं, नम्बर होते हैं। इसलिए यहाँ रास्ता ढूँढ़ने में दिक़्क़त नहीं होती। पाँचवीं एवेन्यू न्यूयार्क

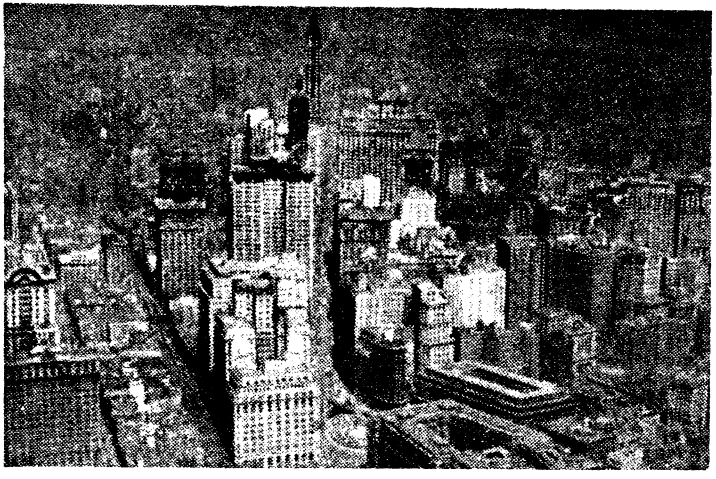

न्यूयार्क एक छोटे द्वीप पर बसा है। पृष्ठ २७

को एक बड़ी मशहूर सड़क है। इसमें बड़ी सुन्दर-सुन्दर दूकानें और मशहूर इमारतें हैं।

एक दिन मैं इस एवेन्यू पर टहलने गया और एक स्ट्रीट पर घूमा। इस स्ट्रीट पर मुझे एक गिरजाघर मिला। यह गिरजाघर हिन्दुस्तान के गिरजाघरों में किसी से छोटा न था पर बड़ी-बड़ी इमारतों के बीच में यह मुझे ऐसा जान पड़ा मानो गुड़ियों का घर हो।

बड़े-बड़े अमीर आदमी भी पूरे मकान में नहीं रह सकते। अधिक से अधिक एक मंज़िल के सब कमरों को वे ले सकते हैं, जहाँ अमीरों का यह हाल है वहाँ ग़रीबों के बारे में कुछ कहना ही फ़ज़ूल है। वे सिर्फ़ एक या दो कमरे लेकर रहते हैं। उसका भी उन्हें बहुत ज़्यादा किराया देना पड़ता है।

न्यूयार्क में इतने घने और ऊँचे मकान इसलिए बने हैं कि वह एक छोटे टापू पर बसा हुआ है और हर एक आदमी बाज़ार के पास रहना चाहता है। बाहर फैलने के लिए जगह न होने के कारण लोग ऊपर घर बनाते चले जाते हैं। यदि इन मकानों में आग लग जाती है तो लोगों को बे-खतर बाहर निकलना मुश्किल हो जाता है। ऐसे मौक़ों के लिए ऊपर की खिड़कियों से बाहर की तरफ़ लोहे के रास्ते लगे होते हैं।

न्यूयार्क में एक बड़ा-सा बाग़ भी है जिसे सेंट्रल पार्क कहते हैं। इसमें बड़े-बड़े पेड़ हैं और बहुत दूर तक हरी घास

फैली हुई है। कोई भी इस बाग़ में जाकर अपना जी बहला सकता है। मैंने इस बाग़ में हज़ारों गिलहरियाँ देखीं जो बिलकुल हमारे देश की गिलहरियों की तरह थीं, सिर्फ़ थोड़ी-सी बड़ी थीं। ये गिलहरियाँ आदमियों में इतनी हिल-मिल गई थीं कि आकर मेरे हाथ से अख़रोट खा जाती थीं। मैंने एक ऐसा आदमी देखा जिसके जेब में ये गिलहरियाँ घुस जाती थीं और बाहर निकल आती थीं।

इस बाग़ की चिड़ियाँ भी इतनी पालतू हो गई थीं कि कोई उनके पास जाता था तो भागती नहीं थीं। इसकी एक वजह यह भी है कि लड़के उनको छेड़ते नहीं थे। मैं चाहता हूँ हमारे देश के लड़के भी न्यूयार्क के लड़कों की तरह जानवरों से छेड़-छाड़ न करें।

---

(१३)

न्यूयार्क से सेनफ़्रांसिसको

न्यूयार्क से रेलगाड़ी में बैठकर हम लोग सेनफ़्रांसिसको पहुँचे। इस सफ़र में पाँच रात और तीन दिन लगे। अमरीका की रेलों में सोने के लिए अलग से टिकट ख़रीदना पड़ता है। लगातार पाँच रात हम लोग नहीं जग सकते थे इसलिए पिता जी ने सोने के लिए भी टिकट ख़रीदा। एक रात के लिए सफ़र-किराया के अलावा दो डालर जो क़रीब ६ रुपये के बराबर

होते हैं देने पड़ते हैं। सोने के लिए अलग गाड़ियाँ बनी होती थीं, टिकट लेने के बाद उन्हीं में हम लोग गये। मुलायम बिछौने बिछे थ, उन पर सफ़ेद चादरें पड़ी थीं। तकिया और कम्बल आदि रखे थे। यह सामान रोज़ बदला जाता है। हिन्दुस्तान की तरह यहाँ बिस्तर लेकर सफ़र करने की ज़रूरत नहीं।

जिस डब्बे में हम लोग सोते थे, उसमें बिछौना आदि ठीक रखने के लिए एक निग्रो नौकर था। सोनेवालों को एक दूसरे से अलग रखने के लिए पर्दे टँगे थे जिन्हें गिराकर वह हर एक को एक दूसरे से अलग कर देता था। नींद लेने की गाड़ी के दोनों तरफ़ पोशाक पहनने के कमरे थे जिनमें एक पुरुषों के लिए था और दूसरा स्त्रियों के लिए।

न्यूयार्क से शाम की चली गाड़ी दूसरे दिन सबेरे बफलो नाम के एक स्टेशन पर खड़ी हुई। यह न्यूयार्क से बहुत छोटा शहर है और इसकी इमारतें दो मंज़िल से ज्यादा ऊँची नहीं हैं। बहुत-से मकान लकड़ी के बने है।

बफलो के पास ही नियाग्रा का नामी झरना है। बफलो से कोई भी आदमी बिजली से चलनेवाली गाड़ी में बैठकर एक घंटे में वहाँ पहुँच सकता है। यहाँ नदी ४,०६० फ़ीट चौड़ी है और १६७ फ़ीट उँचाई से दो धारों में होकर उसका जल गिरता है। यह बड़ा सुहावना दृश्य है। झरना बड़े ज़ोर से गरजता हुआ गिरता है। पानी का रेला इतना तेज़ है कि

यह बहुत दूर पर जाकर गिरता है। धारा और कगारे के बीच में से एक सूखा रास्ता है जिसमें होकर लोग आ-जा सकते हैं।

बफ़लो में एक दिन ठहरकर हम लोगों ने यह झरना देखा और वहाँ से फिर शिकागो गये। हमारा यह रास्ता थोड़ा कनाडा में होकर गया था। कनाडा अँगरेज़ों के अधीन है। अमरीका यद्यपि पहले अँगरेज़ों के अधिकार में था पर अब एक स्वतंत्र राज्य है।

---

(१४)

शिकागो और नमक की झील

शिकागो को मैंने बिलकुल न्यूयार्क की तरह पाया। यहाँ की इमारतें कई-कई मंज़िल ऊँची थीं और सड़कें चलनेवालों से खचाखच भरी थीं।

शिकागो में हम एक दूकान में गये। यह कई मंज़िल ऊँची थी और लिफ़्टों के द्वारा इसमें जाना होता था। इस दूकान में सुई से लेकर किताबें रखने की आलमारी तक और जूते से लेकर बिस्कुट से भरे संदूक़ तक मिल सकते थे। संसार में यह सबसे बड़ी दूकान कही जाती है। यह कहने के लिए कि यह चीज़ संसार के सबसे बड़ी दूकान की है मैंने

इसमें से पाँच आन में जापान का बना चीनी मिट्टी का एक प्याला ख़रीदा।

इस दूकान से निकलने पर मोटर में बैठकर हम लोग मिचिगन झील देखने गये। किनारे पर एक बहुत सुन्दर बाग़ लगा हुआ था। सेंट लारेन्स नदी में यह एक बहुत बड़ी झील है। इसमें समुद्र के समान ऊँची लहरें उठती थीं। लेकिन इसका पानी खारी नहीं था। यही इसमें और समुद्र में फ़रक़ था।

यहाँ से एक सुहावने देश में घूमते हुए हम लोग नमक की झील को पार करके उसके किनारे पर बसे हुए शहर में पहुँचे। इस झील का पानी समुद्र के पानी से भी खारा था। लोगों ने मुझसे कहा कि इसका चौथाई हिस्सा तो बिलकुल नमक है। किनारे पर की बालू में हम लोगों ने नमक मिला हुआ देखा। कहीं-कहीं लहरों पर तैरता हुआ नमक का फेन भी दिखलाई पड़ता था।

यह झील बहुत गहरी नहीं थी। इसके ठीक बीचोबीच में से एक रेलवे लाइन गई थी जो बजाय पुल के एक बाँध पर बनी थी।

इस झील में कोई डूबता नहीं। नमक की वजह से इसका पानी इतना भारी है कि जो गिर जाता है वह ऊपर ही उतराता रहता है।

---

(१५)

राकी पहाड़ पर

नमक की झील से आगे बढ़कर हम लोग राकी पहाड़ पर आये। यह पहाड़ अमरीका के पच्छिमी किनारे पर बहुत दूर तक समुद्र के समानान्तर चला गया है।

अब हम लोग एक गाड़ी में सवार थे और गाड़ी पहाड़ पर चढ़ी जा रही थी। बहुत-सा बोझा और बहुत-से आदमियों को लेकर इतनी बड़ी गाड़ी का पहाड़ पर चढ़ना देखने ही लायक़ था। हिन्दुस्तान में पहाड़ पर छोटी गाड़ियाँ चलती हैं पर यहाँ मानो ज़मीन और पहाड़ में कोई फ़रक़ नहीं था। ज्यों-ज्यों हम ऊपर चढ़ने लगे हमें ऐसा जान पड़ा मानो हमारी गाड़ी चक्कर काट रही है।

पहाड़ की चोटियों पर हमने देखा कि बर्फ़ बिछी हुई है। हमारे नीचे कुहरा इतना घना पड़ रहा था कि बहुत दूर तक हमें कुछ दिखाई नहीं पड़ा। ऊपर चढ़ते-चढ़ते हम उस स्थान पर पहुँचे जहाँ हमारी गाड़ी एक मकान के भीतर से जा रही थी। यह मकान इसलिए बने थे कि जो बर्फ़ गिरे वह इन्हीं की छतों पर रह जाय और नीचे आकर लाइन को मूँद न दे। इन घरों की दीवालें बीच में फ़ासिला दे-देकर तख़्तों की बनाई गई थीं जिससे भीतर ख़ूब रोशनी आ सकती थी।

सबसे ऊपर एक गाड़ी थी जिसमें कुर्सियाँ रक्खी थीं। वह बिलकुल खुली गाड़ी थी और इसलिए बनी थी कि कुर्सियों पर बैठकर हम जो चाहें अच्छी तरह देख सकें। यहाँ बहुत ज़ोर की ठंढ पड़ रही थी।

इस स्थान से ज्यों-ज्यों गाड़ी उतरने लगी त्यों-त्यों ठंढ कम होती गई। और नीचे उतरने पर अनाज और तरकारियों के हरे-भरे खेत और धूप दिखाई पड़ी।

नीचे के मैदान में पहुँचने पर हम लोगों ने एक बड़ी ही अजीब चीज़ देखी। अब हम लोग आकलेंड में थे और हमें एक झील पार करनी थी। पर झील पर बजाय पुल के एक बड़ी-सी चबूतरे की तरह नाव खड़ी थी। ड्राइवर ने गाड़ी के दो हिस्से करके पास-पास इस चबूतरे पर खड़ा करा दिया। हम लोग खिड़कियों से बाहर देखने लगे। अब हमारी गाड़ी थी और चबूतरा हम सबको लिये उस पार जा रहा था।

उस पार रेल की पटरियाँ बिछी थीं। चबूतरा उनके पास लाकर इस तरह बाँध दिया गया कि गाड़ियाँ फिर नई पटरी पर चढ़ गईं और हमारी रेलगाड़ी फिर से बड़ी तेज़ी से आगे बढ़ी।

हिन्दुस्तान में कोई ऐसी झील या नदी नहीं है जिसको पार करने के लिए रेल को भारी नाव की ज़रूरत पड़े। हिन्दुस्तान की नदियाँ गरमी में प्रायः सूख जाती हैं इसलिए इन पर आसानी से पुल बँध जाते हैं।

---

(१६)

सेनफ़्रांसिसको

अन्त में एक स्टीमबोट में बैठकर हम लोग सेनफ़्रांसिसको पहुँचे। यह एक अन्तरीप के सिर पर बसा हुआ है। अन्तरीप समुद्र में निकली हुई ज़मीन की नोक को कहते हैं। इससे सेनफ़्रांसिसको में एक बहुत बड़ा और प्राकृतिक बन्दरगाह बन गया है।

यहाँ मैंने कुछ ऐसे लोग देखे जिनके चेहरों पर कानों से बँधे हुए सफ़ेद मलमल के घूँघट-से झूल रहे थे; सिर्फ़ आँख खुली थीं। इन्हें देखकर मुझे पर्देनशीन मुसलमान औरतों की याद आ गई। अँगरेज़ी ढङ्ग की पोशाक पर यह छोटा-सा घूँघट लटकता देखकर मुझे बहुत हँसी आई।

पर हम लोगों को इस तरह नाक और मुँह पर घूँघट लटकाने का कारण जल्दी ही मालूम हो गया। शहर में बड़ा भयानक इन्फ़्लुएंज़ा फैला था। इन्फ़्लुएंज़ा एक छूत की बीमारी को कहते हैं जिसमें ज़ुकाम बिगड़ जाने से सीना जकड़ जाता है और आदमी मर जाता है। सेनफ़्रांसिसको में हम लोगों के पहुँचने से पहले हज़ारों आदमी इस बीमारी के शिकार हो चुके थे।

डाक्टरों को यह मालूम हो गया था कि जो डाक्टर या दाइयाँ चेहरे पर पतली मलमल का नक़ाब लगाकर रोगियों

की देख-भाल करते थे उन्हें यह बीमारी नहीं होती थी और अगर होती भी थी तो उसका ज़ोर बहुत कम रहता था। लेकिन जो यह नक़ाब नहीं लगाते थे वे फ़ौरन इन्फ़्लुएंज़ा के शिकार हो जाते थे और मर जाते थे।

इसलिए सेनफ्रांसिसको में यह क़ानून बन गया था कि शहर के भीतर जो नक़ाब नहीं लगायेगा उसे सज़ा होगी। जब इस नये क़ानून के इश्तहार लगे हुए दिखाई पड़े तो हम लोगों ने भी नक़ाब लगा लिया।

इन नक़ाबों को रोज़ साफ़ करना पड़ता था। मैं अपने नक़ाब को रोज़ गरम पानी में साबुन से धोता था और धूप में उसे सुखा लेता था। ईश्वर की कृपा से यह बीमारी न मुझे हुई और न मेरे पिता को।

ऊपर मैंने गरम पानी का ज़िक्र किया है। इससे यह न समझना चाहिए कि मैं ख़ुद पानी को गरम करता था। सनफ्रांसिसको में यह बड़ा अच्छा क़ायदा है कि वहाँ तमाम शहर में बजाय एक के दो-दो बम्बे लगे रहते हैं। एक ठंढे पानी का और दूसरा गरम पानी का। यह पानी एक जगह पर गरम होता रहता है और वहीं से तमाम शहर को पहुँचाया जाता है।

इस शहर की सड़कों में चढ़ाव-उतार बहुत ज़्यादा है। शहर का एक हिस्सा पहाड़ी पर बसा हुआ है। इसलिए सड़कों पर चलना पहाड़ पर चढ़ने-उतरने के समान जान पड़ता है।

एक किराये की मोटर करके जब हम लोग अपने ठहरने के स्थान पर आये तो मुझे ऐसा मालूम हुआ मानों यह मोटर पीछे को लुढ़क जायगी।

---

(१७)

सेनफ्रांसिसको की कुछ और बातें

सेनफ्रांसिसको में न्यूयार्क ही की तरह ऊँची इमारतें बनती हैं। मैं एक नया बनता हुआ मकान देखने गया। हिन्दुस्तान की तरह वहाँ मकान बनाने का रिवाज नहीं है। ईंटें तो वहाँ काम में लाते ही नहीं। दीवालें बिलकुल गारे की बनती हैं। उनके बीच में नींव से लेकर चोटी तक एक तरह की धातु की एक इंच चौड़ी पट्टियाँ लगाते हैं। ये पट्टियाँ गारे को खूब मज़बूती से पकड़े रहती हैं।

ये इमारतें बड़ी मज़बूत होती हैं पर साथ ही लचीली भी होती हैं। सेनफ्रांसिसको में भूडोल बहुत आते हैं इसलिए जो इमारतें इस तरह बनती हैं उनके गिरने का इतना डर नहीं रहता जितना ईंट की बनी इमारतों का।

हम लोग एक सात मंज़िल के मकान में सबसे ऊपर ठहरे थे। मेरे सोने के कमरे से बाहर की तरफ़ लोहे की एक टेढ़ी-मेढ़ी सीढ़ी ज़मीन तक गई थी। पर इस सीढ़ी से नीचे उतरने की अपेक्षा अन्दर की तरफ़ बने हुए लिफ़्ट से नीचे

जाना मुझे ज्यादा अच्छा लगता था। इस सीढ़ी का क्या मतलब था ? यह मैं न्यूयार्क के बयान में लिख चुका हूँ।

एक बार मेरी इच्छा हुई कि इस सीढ़ी से उतरकर नीचे जाऊँ पर पिता जी ने मुझे मना किया और कहा—"एक तो यह सीढ़ी बहुत हिलती-डुलती और तङ्ग है दूसरे सड़क पर खड़ा हुआ पुलिस का आदमी तुमसे पूछेगा कि जब मकान में आग नहीं लगी है तो इस रास्ते से क्यों उतर रहे हो ? और यह भी हो सकता है कि वह तुम्हें चोर समझे। जब मकान में आग लगती है तभी बाहर की सीढ़ी से लोग आते-जाते हैं वरना नहीं।" यह सुनकर मुझे अपना विचार बदलना पड़ा।

मैं ऊपर लिख चुका हूँ कि सेनफ़्रांसिसको एक अन्तरीप पर बसा हुआ है। इसे क़रीब-क़रीब द्वीप ही समझना चाहिए। पूरब की तरफ़ बन्दरगाह है और बहुत-से व्यापार के घर बने हुए हैं।

पश्चिमी किनारा इससे बिलकुल भिन्न है। यह शान्त महासागर के लिए खुला हुआ है। इस पर एक बड़ा भारी बाग़ लगा हुआ है जिसमें लोग छुट्टी मनाने के लिए भरे रहते हैं।

इस किनारे की तरफ़ पानी में हमें बड़ी-बड़ी चट्टानें दिखाई पड़ीं जिनके आस-पास सील खेला करते थे। सील मछली की तरह एक प्रकार के समुद्री जन्तु को कहते हैं। कभी-कभी वे चट्टानों पर चढ़ जाते, ख़ूब धूप लेते और फिर पानी में कूद

पड़ते तथा ख़ुशी से तैरते हुए बहुत दूर निकल जाते। बाग़ में बैठकर इनके खेल देखना हमें बड़ा अच्छा लगता था।

इसके अलावा समुद्री चिड़ियों के बड़े-बड़े झुण्ड थे जो इधर-उधर रहते थे और बालू में से ढूँढ़-ढूँढ़कर कीड़ों-मकोड़ों को खाते थे। ये चिड़ियाँ बिलकुल पालतू-सी थीं और पास जाने से उड़ती नहीं थीं।

इस शहर में मैंने बड़े-बड़े इश्तहार चिपके देखे जिनमें लिखा हुआ था—"कैलीफ़ोर्निया को सूखने से बचाओ।"

पिता जी से मैंने पूछा—"इसका क्या मतलब है?"

उन्होंने बतलाया—"अमरीका में तमाम प्रजा की राय लेकर राज-काज चलाया जाता है। यह देश बहुत-सी रियासतों में बँटा हुआ है। हर रियासत के लोग देश के फ़ायदे के लिए जैसा चाहते हैं क़ानून बनवा लेते हैं। कुछ रियासतों में यह क़ानून बन गया है कि कोई शराब न बेचे और न पिये। कैलीफ़ोर्निया में भी वैसा ही क़ानून बननेवाला है। सेनफ़्रांसिसको कैलीफ़ोर्निया का एक शहर है। इसलिए यहाँ शराब और ताड़ी बेचनेवालों ने इश्तहार लगवा दिया है कि कैलीफ़ोर्निया को सूखने से बचाओ यानी यहाँ कोई ऐसा क़ानून न बनने दो जिससे ताड़ी की मनाही हो जाय। यदि अधिक लोगों की राय ऐसी ही हुई तो यहाँ रोक का क़ानून नहीं बन सकेगा और यदि अधिक लोगों की राय इसके

ख़िलाफ़ हुई तो यहाँ भी और रियासतों की तरह ताड़ी की मनाही का क़ानून बन जायगा।"

इसका नतीजा देखने के पहले ही हम लोग जापान के लिए रवाना हो गये। हमारा इस बार का जहाज़ क़रीब-क़रीब वैसा ही था जिस पर बैठकर हम लोग हिन्दुस्तान से रवाना हुए थे। इसमें भी दो चिमनियाँ थीं और यह एक जापानी कम्पनी का था।

---

(१८)

होनोलुलू

सेनफ़्रांसिसको से चलने के ६ दिन बाद हमारा जहाज़ होनोलुलू में आकर खड़ा हुआ। होनोलुलू हवायान द्वीप-समूहों में से एक, पर ख़ासा बन्दरगाह है। इसे सैंडविचद्वीपसमूह भी कहते हैं।

जहाज़ पर से होनोलुलू शहर बड़ा सुन्दर दिखाई पड़ता था। समुद्र का किनारा बहुत दूर तक चौड़ा चला गया था। ताड़ आदि के पेड़ बहुत दिखलाई पड़ रहे थे। बन्दर के पास ही बड़ी-बड़ी दूकानें थीं और बिजली की ट्रामगाड़ियाँ चारों तरफ़ दौड़ रही थीं।

जहाँ हमारा जहाज़ खड़ा था, उससे थोड़ी ही दूर पर एक ज्वालामुखी पहाड़ था। इसमें से गरम लावा और धुआँ निकलकर आसमान को छू रहा था।

यह स्थान अमरीका के अधिकार में है। लोग अँगरेज़ी बोलते हैं और अपनी देशी ज़बान भी। जहाज़ से उतरकर हम लोग थोड़ी देर के लिए शहर भी देखने गये। सड़कों पर लड़के कम दिखलाई पड़ते थे पर आदमियों की अच्छी भीड़ थी। आदमी काले पर देखने में अच्छे और तन्दुरुस्त मालूम पड़ते थे।

किनारे पर मैंने बहुत-से लोगों को मछली मारते देखा। वे पानी में बहुत देर तक खड़े रहते थे और हिन्दुस्तान के मल्लाहों की तरह जाल फेंकते थे। मैंने पानी में तैरते हुए और किलोलें करते हुए कुछ लड़कों को भी देखा। वे सब समुद्र के किनारे खेलते हुए हिन्दुस्तान के लड़कों की तरह दिखाई पड़ रहे थे। यह नवम्बर का महीना था पर पानी काफ़ी गरम था।

दूसरे दिन सवेरे हमारा जहाज़ जापान के लिए रवाना हुआ। पिता जी ने कहा—"जापान पहुँचने में कम से कम चार हफ़्ते लगेंगे। ओफ़! बिना ज़मीन देखे हुए कितना लम्बा समय बिताना पड़ेगा?"

---

(१९)

जापान

शान्त महासागर सारी दुनिया के एक तिहाई से कम न होगा। अटलांटिक की तरह इसमें हमें किसी तूफ़ान का

सामना नहीं करना पड़ा पर इसमें एक बहुत ही अचम्भे की बात हुई। अठारह नवम्बर के बाद जब मैं अपनी डायरी लिखने बैठा तो पिता जी ने कहा—"१९ नवम्बर नहीं होगा अब बीस नवम्बर से शुरू करो।"

मैंने पूछा—"क्यों ?"

उन्होंने बतलाया—"अब तक हम बराबर पश्चिम को चलते रहे हैं और हर एक दिन में हम थोड़ा-थोड़ा समय जोड़ते आये हैं। इसका कारण यह है कि ज्यों-ज्यों हम पश्चिम को गये हैं त्यों-त्यों सूरज देर से निकला है। अब यह थोड़ा-थोड़ा समय इकट्ठा होकर पूरा एक दिन हो गया है। इसलिए हमें एक तारीख घटानी पड़ेगी। अगर हम जापान से अमरीका को जाते तो हमें एक तारीख बढ़ानी पड़ती।"

शान्त महासागर को पार करके हमारा जहाज़ याकोहामा पहुँचा। याकोहामा जापान में एक बड़ा भारी बन्दरगाह है। वहाँ से ट्रामगाड़ी में बैठकर हम जापान की राजधानी टोकियो में गये। टोकियो में जापान के राजा के महल बने हुए हैं और बहुत-सी सुन्दर इमारतें और बग़ीचे हैं।

टोकियो से हम कोबी नाम के एक नये बन्दर में पहुँचे। मुझे दुनिया में यह सबसे अच्छा शहर प्रतीत हुआ। शहर के पीछे की तरफ़ एक पहाड़ी है। उस पर चढ़कर देखने से समुद्र बहुत ही सुन्दर दिखाई पड़ता है। हम लोगों ने इस पहाड़ी पर चढ़कर आस-पास की धरती की और आसमान की रङ्ग-बिरङ्गी

शोभा देखी। इस पहाड़ी पर एक झरना था। उसे देखकर लौटते समय हम लोग रास्ता भूल गये। हम लोगों को जापानी भाषा नहीं आती थी और जापान में अँगरेज़ी का बहुत कम प्रचार है। अब रास्ता पूछें तो किससे पूछें। हमें सिर्फ़ अपने ठहरने की जगह का नाम याद था।

आख़िरकार हमें एक जापानी लड़का मिला। वह हम लोगों की अँगरेज़ी समझ लेता था पर ख़ुद अँगरेज़ी में बिलकुल नहीं बोल सकता था। हम लोगों ने अपने ठहरने की जगह का नाम लिया और हाथ के इशारे से उसका रास्ता पूछा। पहले तो लड़का कुछ चकराया पर जल्दी ही उसे एक उपाय सूझा। उसने झुककर एक छोटी-सी लकड़ी उठा ली और रेत पर एक नक़शा खींच दिया। उस नक़शे से हमें अपना रास्ता बड़ी आसानी से मालूम हो गया।

इससे मैंने समझा कि जापान के लड़कों को भूगोल बहुत अच्छी तरह सिखाया जाता होगा। क्या अच्छा हो कि इसी तरह हमारे देश के लड़के भी भूगोल सीखें।

पर जापान में मैंने एक बहुत बुरी बात देखी। वहाँ लोग स्त्रियों के आराम तकलीफ़ की बिलकुल परवाह नहीं करते। मैंने रेल और ट्राम दोनों में देखा कि लोग तो आराम से बैठे रहते हैं परन्तु बेचारी स्त्रियाँ पीठ पर अपने बच्चों को लादे खड़ी रहती हैं और बैठने की जगह नहीं पातीं। हमारे देश में यह अच्छा है कि औरतों के बैठने का अलग इन्तज़ाम रहता है।

और भीड़-भाड़ में मैंने यह भी देखा है कि हमारे देश में लोग खुद खड़े होकर स्त्रियों को बैठने की जगह देते हैं। यह उम्मीद की जा रही है कि जापान जैसे और सब बातों में तरक़्क़ी कर गया है वैसे ही अपनी यह कमी भी पूरी कर लेगा।

---

(२०)

जापानी लड़के

जापान में बच्चे हमेशा अपनी मा की पीठ पर बैठकर चलते हैं। अमरीका में मुझे सड़कों पर लड़के कम दिखलाई पड़ते थे पर जापान में मैं जहाँ गया वहीं झुण्ड के झुण्ड लड़के-लड़कियाँ खेलते मिले। उनके खेलों में से एक यह था—

दो लड़के लकड़ी की एक-एक लम्बी तख़्ती लिये दो तरफ़ से खड़े थे। एक लकड़ी का टुकड़ा जिसमें चिड़ियों के कुछ रँगे हुए पंख बँधे थे उनके बीच में पड़ा था। दोनों उसे अपनी तख़्तियों से एक दूसरे की तरफ़ ठुकरा रहे थे। दोनों की तख़्ती के नीचे एक छोटी-सी गुड़िया बँधी थी। जब कोई लड़का अपनी तख़्ती से उस पंखोंवाली गेंद को ठुकराता था तो ऐसा जान पड़ता था मानों वह गुड़िया दूसरे लड़के को सलाम कर रही हो।

हम लोगों की तरह जापानी लोग भी जब किसी के घर में घुसने लगते हैं तो जूते उतार देते हैं पर वे बिलकुल नङ्गे पाँव

नहीं जाते। जूतों की जगह पर कपड़े के बने पतले स्लीपर पहन लेते हैं। या मोज़े पहनकर जाते हैं। उनके मोज़ों में अँगूठों के लिए अलग जगह बनी होती है। उनके घर बड़े सुन्दर होते हैं और वे दीवारों पर रङ्ग-बिरङ्गे चित्र बनाते हैं। जापानी लोग किसी को जब कोई चीज़ देने लगते हैं तो उसे सलाम ज़रूर करते हैं। पानेवाला भी बिना सलाम किये नहीं रहता। वे सब तरह के अदब-क़ायदों का बहुत ख़याल रखते हैं।

एक बार मैं एक स्कूल देखने गया। दरवाज़े पर पहुँचते ही मेरी नज़र स्लीपरों के एक ढेर पर पड़ी। इन्हें स्कूल में छोड़ लड़के अपने लकड़ी के जूते पहनकर जल-पान करने गये थे। चलते समय ये जूते ख़ूब खटाखट शोर करते हैं।

स्कूल के सब लड़के एक ही तरह की पोशाक पहनते हैं और अपनी टोपियों पर अपने दर्जे का नम्बर लगाये रहते हैं। देखने में वे बड़े चतुर जान पड़ते हैं।

---

(२१)

जापान की कुछ और बातें

कोबी से रेलगाड़ी में बैठकर हम लोग उसाका गये। यह शहर बिलकुल पानी पर बसा हुआ है। सड़कों पर बजाय गाड़ियों के नावें चलती हैं। इन सड़कों को नहरें कह सकते

हैं। कुछ बड़ी-बड़ी सड़कें हैं जो उन नहरों के ऊपर पुल बाँध-कर बनाई गई हैं। इनके ऊपर बिजली की ट्रामगाड़ियाँ चलती हैं।

उसाका की तरह इटली में भी एक शहर है जो पानी पर बसा हुआ है। इसका नाम वेनिस है। वेनिस बहुत पुराना शहर है और बहुत सुन्दर बसा हुआ है। इसलिए कभी-कभी उसाका को जापान का वेनिस कहते हैं।

ट्रामगाड़ी में बैठकर हम लोग एक रेलवे स्टेशन पर गये जो एक पुल पर बना हुआ था। यहाँ से हम लोग एक रेलगाड़ी में सवार हुए। यह रेलगाड़ी भी बिजली से चलती थी और इसमें क़रीब ६ डिब्बे थे।

यह गाड़ी बड़ी उँचाई पर जा रही थी। इसलिए हम बहुत दूर तक देख सकते थे। चारों तरफ़ बड़ा सुन्दर देश था। छोटे-छोटे पेड़ों और हरी घासों से ढकी पहाड़ियाँ जी लुभा रही थीं।

इस तरह सैर करते हुए हम नारा पहुँचे। जापान में यह बहुत ही पवित्र तीर्थ माना जाता है। सड़कों पर पालतू हिरन फिरते थे और हम लोगों के हाथ से कुछ खाने के लिए तैयार दिखाई पड़ते थे। मैंने कुछ जापानी रोटियाँ ख़रीदकर जो बहुत मीठी और मुलायम होती हैं उनको खिलाया।

जिन सड़कों पर ये हिरन फिर रहे थे, उनके एक ही तरफ़ मकान थे। दूसरी तरफ़ बाग़-सा लगा था। सड़कों पर हिरनों

को इस तरह फिरते देखना मुझे अच्छा लगता था। वे बाज़ार तक खाना माँगते चुपचाप चले जाते थे।

बुद्धदेव के एक मन्दिर के बारे में हम लोगों ने बड़ी अजीब बातें सुनी थीं। पिता जी मुझे वह मन्दिर भी दिखाने ले गये। दरवाज़े पर दो सिपाहियों की भद्दी मूर्त्तियाँ खड़ी थीं। इनका यह काम था कि भूत-पिशाच आदि मन्दिर में न घुसने पावें।

एक अहाते को पार करने के बाद हम लोग खास इमारत में आये। उसमें हम लोगों ने एक बैठे हुए आदमी की बहुत ही बड़ी मूर्त्ति देखी। यह मूर्त्ति सोने से मढ़ी हुई थी। यह इतनी बड़ी थी कि इसकी एक उँगली मेरे पिता से ज़्यादा बड़ी और मोटी थी। इसकी पूरी उँचाई ५३ फ़ीट थी।

यह भगवान् बुद्ध की मूर्त्ति थी। इसके दोनों तरफ़ उन्हीं की दो मूर्त्तियाँ और थीं। और बड़ी मूर्त्ति के सिर के पीछे एक पंखेनुमा आड़ पर बहुत-सी छोटी-छोटी मूर्त्तियाँ थीं।

जितनी बड़ी यह मूर्त्ति थी उतना ही बड़ा इसके लिए बजाने का घंटा भी था। इस घंटे के पास ही एक पेड़ का तना छत से इस तरह लटकाया गया था कि उसमें बँधी रस्सी को खींचन और ढील देने से वह घंटे में लगे। मैंने भी रस्सी खींचकर इस घंटे को बजाया और मुझे बड़ा मज़ा आया।

याकोहामा की तरफ़ जाते हुए हम लोगों ने एक अजीब पहाड़ देखा। यह जापान के बीच में बर्फ़ की टोपी पहने

बर्फ़ की टोपी पहने हुए फ़्यूजीयामा पहाड़ । पृष्ठ ४७

महादेव जी की तरह खड़ा है। इसे फ्यूजीयामा कहते हैं। जापानी लोग इस पहाड़ का बड़ा मान करते हैं और प्रायः सब तसवीरों में इसको स्थान देते हैं।

कोबी से हम लोग पानी के रास्ते से नागासाकी गये। कहीं जाने से पहले यहाँ जहाज़ खूब कोयला भर लेते हैं। हमारा जहाज़ भी जब कोयला आदि लेकर तैयार हुआ तो हम लोग मनीला को रवाना हुए।

---

(२२)

मनीला

नागासाकी से चला हुआ हमारा जहाज़ फिलीपाइंस द्वीप-समूह की राजधानी मनीला में आकर खड़ा हुआ। ये द्वीपसमूह आज-कल अमरीका के अधिकार में हैं।

जहाज़ से उतरने के बाद एक ट्रामगाड़ी में बैठकर हम लोग पुराने शहर में गये जो चारों तरफ़ एक दीवाल से घिरा हुआ है। इस शहर में मकान, बाग़, सड़कें और गिरजाघर आदि सब स्पेन-देश के ढङ्ग के बने हुए हैं। पिता जी ने कहा—"इस शहर को देखने से तो ऐसा जान पड़ता है मानों हम लोग स्पेन में हैं जो कि यहाँ से हज़ारों मील दूर होगा। इसका कारण यह है कि एक समय में ये द्वीपसमूह स्पेन के अधिकार में थे।

राजधानी होने से मनीला को उन्होंने बिलकुल अपने ढङ्ग का बसाया था।

पुराने शहर की दीवालों को पार कर हम लोग उस हिस्से में आये जो बिलकुल नये ढङ्ग पर बसा हुआ था। यह हिस्सा अमरीकन ढङ्ग पर आबाद किया गया था पर इमारतें न्यूयार्क और शिकागो की तरह बहुत ऊँची नहीं थीं।

थोड़ी ही दूर पर एक गाँव था। एक मित्र के साथ हम लोग उसे देखने गये। मकान लकड़ी के बने हुए थे और घास-फूस से छाये हुए थे। बहुतों में बिजली की रोशनी का इन्तज़ाम था और दो-एक घरों में हमने पियानो धरा देखा और कुछ गाना भी सुना।

यहाँ की सरकार लड़कों को अँगरेज़ी पढ़ाने के लिए बड़ा ज़ोर दे रही है। सब सरकारी स्कूलों में अँगरेज़ी पढ़ाई जाती है। कुछ तो इसलिए कि सरकार इन्हें बिलकुल अमरीका के ढङ्ग के नागरिक बनाना चाहती है और कुछ इसलिए कि यहाँ क़रीब आठ देशी भाषायें बोली जाती हैं और किसी में ऐसी किताबें नहीं हैं जैसी हमारे यहाँ की देशी भाषाओं हिन्दी, बँगला और मराठी आदि में हैं।

पिता जी ने पूछा—"विनोद, अगर तुम यहाँ के रहनेवाले होते तो क्या पढ़ते?"

मैंने जवाब दिया—"पिता जी, मैं यहाँ की जो देशी भाषा सबसे अच्छी होती उसे पढ़ता और सबको वही पढ़ाता।

उसमें मैं अच्छी-अच्छी किताबें लिखता और उसकी उन्नति के उपाय सोचता।"

पिता जी ने हँसकर कहा—'ठीक है। तुम्हारा मातृ-भाषा हिन्दी है और वह सब भाषाओं से अच्छी भी है इसलिए मुझे विश्वास है कि तुम बराबर हिन्दी की उन्नति में लगे रहोगे।"

स्त्रियों की और लड़कियों की पोशाक देखकर मुझे बहुत हंसी आई। उनकी बाँहें कड़ी और महीन मलमल की इतनी चौड़ी होती हैं कि जान पड़ता है मानों चिड़ियों के दो पिंजड़े लटक रहे हों। उनका लहँगा बहुत लम्बा और ढीला-ढाला होता है और पीछे की तरफ़ फ़र्श पर घिसटता हुआ चलता है। जब वे सड़कों पर चलती हैं तो उसे उठाकर हाथ पर लटका लेती हैं ताकि उसमें धूल न लगे।

---

(२३)

हांगकांग

मलीना से हम लोग हांगकांग आये। यह चीन के पूर्वी किनारे पर एक टापू है और आज-कल अँगरेज़ों के अधिकार में है।

जब मैं कोबी में पहुँचा था तो मुझे जान पड़ा था मानों वह संसार में सबसे सुन्दर जगह है। पर हांगकांग देखने

पर मैं यह निश्चय नहीं कर सका कि दोनों में कौन अच्छा है।

हांगकांग पहाड़ी टापू है। पहाड़ बीच में बहुत ऊँचे हैं और चारों तरफ़ ढालू होते चले गये हैं। सबसे ऊँची चोटी तक रेल गई है। इस चोटी पर जाकर चारों तरफ़ का पहाड़ी दृश्य देखने की हमारी बड़ी इच्छा थी। पर एक तो रेल की लाइन बिगड़ी थी दूसरे आसमान साफ़ नहीं था इसलिए हम ऊपर नहीं जा सके।

हांगकांग की सड़कों पर जो चीनी स्त्रियाँ दिखाई पड़ीं वे जापानी स्त्रियों से मिलती-जुलती थीं पर उनके बाल सँवारने का ढङ्ग हिन्दुस्तान की स्त्रियों का-सा था। जापानी स्त्रियाँ अपना जूड़ा सिर के बिलकुल ऊपर बाँधती हैं। उससे वे अपने मामूली क़द से कुछ बड़ी जान पड़ती हैं।

हांगकांग न्यूयार्क की तरह टापू पर बसा हुआ है और उसी की तरह इसकी आबादी भी बढ़ रही है। १९२१ की मर्दुमशुमारी के समय इसकी आबादी क़रीब १० लाख थी। जिस तरह लोगों की तादाद बढ़ने से न्यूयार्क में बहुत ऊँचे मकान बन गये उसी तरह अब हांगकांग में भी बनते चले जा रहे हैं।

हांगकांग की दूकानों के साइनबोर्ड देखकर मुझे जापान की दूकानों की याद आ जाती थी। क्योंकि जापानी लोग भी अपनी दूकानों के नाम आदि लिखने में चीनी अक्षर इस्तेमाल करते हैं।

चीनी लोगों के पढ़ने और लिखने का तरीक़ा अजीब है। उनके अक्षरों की क़तारें दुनिया की और भाषाओं की तरह एक तरफ़ से दूसरी तरफ़ को नहीं होतीं बल्कि ऊपर से नीचे को जाती हैं। दूकानों के नाम बड़े-बड़े अक्षरों की एक क़तार में लिखे जाते हैं जो पट्टियों की तरह नीचे को लटकते रहते हैं।

---

(२४)

चीनी भोजन का तरीक़ा

जब हम लोग हाँगकाँग में ठहरे हुए थे तब एक चीनी औरत ने हमें दावत दी। इस चीनी औरत ने कलकत्ता देखा था इसलिए कुछ हिन्दुस्तानी तरीक़े उसे मालूम थे। हम लोग भी कुछ चीनी तरीक़े जानना चाहते थे इसलिए उस औरत के यहाँ हम लोग बड़ी ख़ुशी के साथ गये।

इस बड़े सफ़र में मुझे सब तरह का खाना खाने की आदत पड़ गई थी। हम लोग एक मेज़ के चारों तरफ़ बैठे। हमें एक चीनी थाली और खाना खाने की लकड़ियों का एक जोड़ा दिया गया। तरह-तरह के पके हुए खाने तश्तरियों में सजाकर बीच में रक्खे गये थे।

चीन में यह क़ायदा है कि जिस आदमी को जो चीज़ अच्छी लगे उसे वह बीच मेज़ से उठाकर अपनी थाली में जितना चाहे

रखकर खा सकता है। पर उसे खाना हाथ से नहीं लकड़ियों से छूना चाहिए।

गेहूँ की बनी हुई एक तरह की सफ़ेद चीज़ थी जो उलझे हुए ऊन की तरह जान पड़ती थी और कई तरह की ज़ायकेदार रोटियाँ थीं। २० मिनट के बाद हमें चावल मिला। लकड़ी में पकड़कर खाना खाने की मेरी आदत न थी। मेरा हाथ दर्द करने लगा। मेरी यह इच्छा हो रही थी कि मैं अपने हिन्दुस्तानी तरीक़े में हाथ से खाऊँ पर पिताजी ने कहा—"नहीं, ऐसा करो कि बाद को यह कहने का समय आवे कि तुमने बिलकुल चीनी तरीक़े में खाना खाया।"

लड़कपन ही से खाते-खाते चीन के लोग इस तरह खाना खाने के आदी हो जाते हैं। बन्दरगाह में मैंने कुलियों को देखा कि लकड़ियों से ही ये काफ़ी खाना उठाकर मुँह में डाल लेते थे। कुलियों के खाना खाने की थालियाँ चौकोर और सन्दूक़नुमा थीं। उनमें तीन हिस्से थे, सबसे बड़ा चावल, दूसरा दाल की तरह एक गरम चीज़ और तीसरा चटनी रखकर खाने के लिए था।

---

(२५)

फिर अँगरेज़ी जहाज़ पर

हाँककांग से हम लोगों ने जापानी जहाज़ छोड़ दिया और फिर अँगरेज़ी जहाज़ पर सवार हुए। इस जहाज़ पर मुझे ऐसा

मालूम पड़ा मानों मैं अपने घर में आगया हूँ क्योंकि इतने दिनों तक अँगरेज़, अमरीकन, निग्रो और जापानी आदि लोगों के बीच में रहने के बाद अब मैं क़रीब क़रीब फिर अपने हिन्दुस्तानी भाइयों के बीच में आगया था।

अब तक मैं जितने जहाज़ों पर चढ़ चुका था यह उन सबसे छोटा था। इसमें केवल एक ही चिमनी थी और क़रीब ६०० सर्विया के रहनेवाले सवार थे। उनमें अधिकांश स्त्रियाँ और बच्चे थे।

सर्विया योरप में वह छोटा-सा देश है जहाँ से योरप की लड़ाई शुरू हुई थी। जब दुश्मन ने उस देश को उजाड़ कर दिया तो बेचारे सर्विया-निवासी अपनी जान लेकर भागे। उनमें से कुछ रूस में भाग गये थे और व्लाडीवोस्टक तक पहुँच गये थे। अब लड़ाई ख़तम हो जाने से वे अपने देश को लौट रहे थे और ब्रिटिश सरकार उन्हें अपने जहाज़ों में भेज रही थी।

महा लड़ाई से उन बेचारों ने बहुत तकलीफ़ उठाई थी। उनमें बहुत-से अभी बच्चे ही थे। मैं ईश्वर से प्रार्थना करने लगा—"हे भगवन्, अपने देश में पहुँचने पर ये अपने पुराने घरों को फिर पा जायँ?" उनमें से बहुतों के बाप और बड़े भाई लड़ाई में मारे गये थे।

जब हमारा जहाज़ सिंगापुर में पहुँचा तो मैंने रेड क्रास सोसाइटी के लोगों को अपने साथ बैठे हुए दुखी सर्विया-

निवासियों को कपड़े बाँटते देखा। सिंगापुर में इतनी गर्मी पड़ती थी कि उन्हें कपड़ों की बिलकुल ज़रूरत नहीं थी पर जब वे अपने ठंढे देश में पहुँचेंगे तो ये कपड़े उनकी बड़ी मदद करेंगे।

धूप से बचने के लिए उनके पास कोई ऐसी पोशाक नहीं थी जैसी अँगरेज़ लोग हिन्दुस्तान में पहना करते हैं। ठंढे देश के वासी होने से उन्हें सिंगापुर की गरमी से बड़ी बेचैनी हुई। उनमें से दो एक को लूक भी लग गई। सिंगापुर विषुवत्‌रेखा से सिर्फ़ दो डिग्री के क़रीब पर है इसलिए वहाँ स्वभावतः गर्मी बहुत तेज़ पड़ती थी।

---

(२६)

सिङ्गापुर

सिंगापुर बड़ा मनोहर स्थान है। यहाँ बिजली की एक ट्रामगाड़ी चलती है जो योरपीय सौदागरों की दूकानों से होती हुई जाती है। ये दूकानें वैसी ही हैं जैसी कि हम हिन्दुस्तान के बड़े-बड़े शहरों में देखते हैं।

शहर का एक हिस्सा बिलकुल चीनी जान पड़ता था और दूसरा बिलकुल हिन्दुस्तानी। अपने कुछ दोस्तों के साथ मोटर में बैठकर मैंने शहर का चक्कर लगाया। सबसे पहले मेरी निगाह

एक अजीब तरह के पेड़ पर पड़ी। इसकी पत्तियाँ केले की तरह थीं और तना ताड़ की तरह। इसका नाम था यात्रियों का ताड़।

शहर के बाद पहाड़ी पर रबड़ के बाग़ लगे थे। इनके देखने की मेरी बड़ी इच्छा हुई। एक तार से पेड़ में बहुत-से छोटे-छोटे प्याले बँधे हुए थे और प्यालों के मुँह के पास उनकी छाल ज़रा-ज़रा-सी काट दी गई थी। छिलकों से पेड़ का दूध धीरे-धीरे बहकर इन प्यालों में इकट्ठा होता था। यही रबड़ था। आजकल रबड़ कितने कामों में आता है यह बताने की ज़रूरत नहीं।

शहर के निचले हिस्से में हमने पानी पर बने हुए बहुत-से मकान देखे। ये मकान पानी में लकड़ी गाड़कर उसके ऊपर बनाये गये थे ताकि पानी उन तक न पहुँचे। लट्ठों पर बने हुए इस तरह के मकान मनीला में भी हम लोगों ने देखे थे।

सिङ्गापुर अँगरेज़ी राज्य में है और हिन्दुस्तान के साथ उसका अच्छा सम्बन्ध है। यह एक बड़ा अच्छा बन्दरगाह भी है।

---

(२७)

घर के रास्ते पर

सिङ्गापुर से उसी जहाज़ पर हम लोग कोलम्बो पहुँचे। कोलम्बो लङ्का की राजधानी है और हिन्द-महासागर में अच्छा बन्दरगाह है। इस रास्ते में एक बड़ी सनसनी फैलनेवाली

घटना हो गई। सिंगापुर से पेनांग तक एक जलडमरूमध्य से सफ़र करने के बाद जब हम खुले समुद्र में आये तो फ़ासले पर आफत में फँसा हुआ एक जहाज़ हमें दिखलाई पड़ा। हमारे जहाज़ में बेतार का तार था पर उसमें नहीं था इसलिए झण्डी के इशारे से बातचीत होने लगी।

यहाँ बेतार का तार किसको कहते हैं यह बतला देना ज़रूरी है। खम्भे गाड़कर और उनमें तार बाँधकर जो ख़बर भेजी जाती है उसे तार कहते हैं। बेतार के तार में खंभे आदि गाड़ने की ज़रूरत नहीं होती। एक ख़ास तरह के यंत्र होते हैं जो जहाँ-जहाँ बने होते हैं वहाँ-वहाँ ख़बर पहुँच जाती है। हमारे जहाज़ पर ऐसा यन्त्र बना था पर उस पर नहीं था इसलिए झण्डी से इशारा करने की ज़रूरत पड़ी थी।

उस जहाज़ का एंजिन क़रीब-क़रीब टूट गया था। इसलिए उस जहाज़वाले चाहते थे कि हमारा जहाज़ कोलम्बो तक उसे खींचकर ले जाय। इसलिए हम लोगों ने उस जहाज़ को अपने जहाज़ के पिछले हिस्से से एक मज़बूत रस्से से बाँध दिया।

थोड़ी दूर चलने पर रस्सा टूट गया। मल्लाहों ने वही काम फिर नये सिरे से किया और इस बार तारों के रस्सों से उसे बाँधा। यह रस्सा भी टूट गया। अब रात हो रही थी इसलिए जहाज़ वहीं ठहर गये। सबेरा होने पर दो मज़बूत रस्सों से उसे बाँधकर हम फिर आगे बढ़े। पर वह जहाज़ बड़ा पुराना था और खींचने से टूटने लगा। मुसाफ़िरों के साथ उसके माल-

असबाब को हम लोग अपने जहाज़ पर लाद नहीं सकते थे और उसका कप्तान कुछ खोना नहीं चाहता था इसलिए उस जहाज़ को वहीं छोड़कर हम लोग कोलम्बो चले आये। ख़बर पाने पर उस जहाज़ की रक्षा करने के लिए कोलम्बो से एक मज़बूत जहाज़ रवाना हुआ।

कोलम्बो में पहुँचकर मैं बहुत खुश हुआ कि अब मैं सारी पृथ्वी की परिक्रमा करके अपने प्यारे हिन्दुस्तान के बहुत पास आ गया था। पिताजी ने मा को तार-द्वारा वापस आने की सूचना दे दी थी। इसलिए वह छोटी बहन मुन्नी के साथ हम लोगों के बम्बई पहुँचने से पहले ही बन्दरगाह पर आगई थी। जहाज़ से उतरते ही मैंने मा को देखा। मैं दौड़कर उससे लिपट गया। पिता जी ने मुन्नी को गोद में उठा लिया।

वहाँ से रेल में बैठकर हम लोग घर आये। मुन्नी के लिए सब देशों से हम अच्छे-अच्छे खिलौने लाये थे। वह उन्हें पाकर बहुत खुश हुई। मुझे दुनिया की बहुत-सी बातें मालूम हो गई थीं उन्हें कहकर मैं मा का और अपने मित्रों का दिल बहलाने लगा।

समाप्त